अध्याय - 1

निराला की जीवनी तथा साहित्य

अध्याय - 1

निराला की जीवनी तथा साहित्य

1·1 निराला की जीवनी :-

1·1·1 जन्म और माता-पिता :-

बंगाल की सुरम्य शस्य-श्यामला भूमि में महिषादल नामक रियासत थी। महिषादल राज्य में पंडित राम सहाय त्रिपाठी सिपाहियों के ऊपर जमादार थे। पंडित रामसहाय त्रिपाठी उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के गढ़ाकोला नगर के रहने वाले थे। पंडित रामसहाय त्रिपाठी चालीस वर्ष पार कर चुके थे और आपने अभी तक सन्तान का मुँह न देखा था। पंडित रामसहाय की पहली पत्नीका देहान्त होने के पश्चात आपने फतहपुर के दुबों के यहाँ दूसरा ब्याह किया। पंडित रामसहाय त्रिपाठी की सन्तान की इच्छा सफल हो गई। माघ शुक्ल 11 संवत् 1955[1] तद्नुसार 21 फरवरी 1899 को पंडित रामसहाय त्रिपाठी के घर पुत्र का जन्म हुआ। उस दिन मंगल था, पंडित ने जन्मकुण्डली बनाई। पंडित ने कहा, "लडका मंगली हैं दो ब्याह लिखे हैं, बड़ा भाग्यवान, बड़ा नाम करेगा। इसका नाम रखो - सुर्जकुमार। पंडित रामसहाय ने सोचा - दो ब्याह हमारे हुए, बेटा भी कुल की रीति निभायेगा।[2] इस प्रकार निरालाजी का जन्म गढ़ाकोला जिला उन्नाव के बैसवाडे गाँव के एक कान्यकुब्ज ब्राहमण परिवार में हुआ था। आपका जन्म दिवस वसंत पंचमी के दिन मनाने का प्रचलन हो गया था।

निरालाजी के जन्म के ढाई वर्ष उपरान्त आपकी माता का देहान्त हो गया था। इस प्रकार बचपन में ही निरालाजी को माता के प्रेम से वंचित होना पड़ा। माता के निधन से जो एक अभाव व्यक्ति के जीवन में आ जाता हैं, वह

व्यक्तित्व के विकास को एक दूसरी ही दिशा प्रदान करता है। माता के अभाव को निरालाजी करूणा, आपनी सर्वव्यापी करूणा से पूरा करते रहे। राहुलजी ने लिखा हैं, "बालक निरालाजी के दिल पर माता की शोचनीय मृत्यू की छाप सदा के लिए अमीट हो गई। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे निरालाजी में जो एक तरह की अन्यूनस्कता देखी जाती हैं, उसका सबसे बड़ा कारण वही घटना हैं। मुश्किल तो यह हैं कि निरालाजी आज भी तीन वर्ष के सूर्यकान्त को उस दूर्घटना का भारी जिम्मेवार मानते हैं।"[3]

पंडित रामसहाय त्रिपाठी की पत्नी की मृत्यू से आपने अपनी सारी ममता बेटे पर केन्द्रित की। सुर्जकुमार को हर तरफ स्नेह मिलता था, स्त्रियाँ हाथों-हाथ रखती। सुर्जकुमार स्वभाव से खिलाडी, नटखट और कुछ-कुछ जिद्दी भी हो चले। सुर्जकुमार को अपने पिता के स्वभाव की उध्दतता भी मिली और आप सहनशील भी बने और कठिन परिस्थितियों के प्रहारों में भी एक निर्भीकता, आपके व्यक्तित्व का स्थायी गुण हो गया, जो आपके भावी जीवन में भी कभी नहीं छूटी। पंडित रामसहाय त्रिपाठी डील-डौल के लम्बे चौडे थे। सुर्जकुमार को लम्बा-चौडा शरीर अपने पिता से ही विरासत में मिला था।

1·1·2 शिक्षा :-

बचपन में सुर्जकुमार की शिक्षा सुव्यवस्थित रूप से न चल पाई थी। सबसे पहले आठवीं कक्षा में आपने महिषादल स्कूल में प्रवेश लिया। स्कूली शिक्षा आपने बंगला में ही प्राप्त की। इस प्रकार बंगला आपकी मातृभाषा के रूप में रही। यहीं आपने संस्कृत और अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त की। प्रारम्भ ही से अध्यात्म की ओर आपका झुकाव रहा। इस अत्यन्त संवेदनशील एवं भावुक बालक पर कवीन्द्र रवीन्द्रजी का प्रभाव पडा। अब आपकी वृत्ति पद्माकर के छन्दो" और पंचशिका के शृंगारिक श्लोको में रमने लगी। आपने पिता की प्रेरणा से ही "हनुमान चालिसा" और "रामचरित मानस" का अनेक बार पारायण किया।

सुर्जकुमार बचपन में खेल-कुद में मस्त रहते थे। आप फुटबाल और कसरत-कुश्ती के भी शौकिन थे। महिषादल के राज परिवार में सुर्जकुमार का प्रवेश निर्बन्ध रहा हैं। सुर्जकुमार की माता के देहान्त के बाद महिषादल के राजा साहबने इस सुन्दर बाल के लालन-पालन में दिलचस्पी दिखाई और राजकुमारों के साथ आप बढ़ने लगे।[4]

बैसवाडे का जीवन सुर्जकुमार के संस्कारों को निर्माण करने के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। उत्तर प्रदेश के बैसवाडे क्षेत्र की ग्राम्य-जीवन की सादगी, श्रम-साधना, शक्ति का दुर्धर्ष आख्यान और पौरूषमय शरीर, कृषक जीवन की ईमानदारी यह सुर्जकुमार को बैसवाडा की देन हैं।[5] बैसवाडे की भूमि ने हिन्दी साहित्य को अप्रतिम व्यक्ति दिए हैं - प्रतापनारायण मिश्र सरीखे निबन्धकार, महावीर प्रसाद द्विवेदी सरीखे युग-प्रवर्तक, साहित्य-आचार्य और पंडित नन्ददुलारे वाजपेयी सरीखे समीक्षक इसी बैसवाडे की देन हैं।[6] बैसवाडे का महत्व यहीं हैं कि, सामान्य वर्ग में भी वहाँ साहित्य की परम्परा विद्यमान हैं। बैसवाडी किसानों का भोलापन और उनकी स्वाभाविक विनोदवृत्ति भी सुर्जकुमार को प्राप्त हुई हैं।

इस प्रकार सुर्जकुमार के व्यक्तित्व एवं साहित्य पर बंगाल और बैसवाडे दोनों परिक्षेत्रों के संस्कारों का गहरा प्रभाव पडा। वस्तुतः बंगाल और बैसवाडे के संस्कारों का अद्‌भुत मिश्रण जो आपके व्यक्तित्व में हुआ - वह हिन्दी साहित्य के लिए बडा ही हितकारी सिध्द हुआ।[7]

1·1·3 विवाह और निरालाजी के कवि जीवन में पत्नी का योगदान :-

सुर्जकुमार का विवाह डलमऊ के राम दयाल द्विवेदी व पार्वती देवी की पुत्री मनोहरा देवी से छोटी अवस्था में ही हो गया था। आपकी पत्नी श्रीमती मनोहरा देवी संगीत एवं साहित्य में निपुण थी। आपकी पत्नी रूपवती और गुणवती थी। आपकी पत्नी को खडी बोली का भी ज्ञान छोटी अवस्था में ही हो गया था। इन दोनों का विवाह इ·सन 1911 में हुआ था जब सुर्जकुमार नवीं कक्षा में थे। उस समय आपकी आयु पन्द्रह वर्ष की थी और श्रीमती मनोहरा देवी की बारह वर्ष की।

सुर्जकुमार विवाह के बाद महिषादल में फिर पहले जैसा जीवन बिताने लगे। खेल-कूद में ज्यादा समय पहले ही जाता था, अब पढ़ने में मन और भी कम लगता। अन्य महान साहित्यकारों की तरह सुर्जकुमार का भी मन स्कूल की चार दीवारी में बन्द न रह सका। परीक्षा में फेल हो गये तो पिता ने घर से बाहर निकाल दिया। सुर्जकुमार ऐसे थे कि सीधे ससुराल पहुँच गये। आपके विवाह के एक वर्ष बाद ही आपका गौना कर दिया गया।

हिन्दी सीखने तथा कविता करने की प्रेरणा आपको अपनी पत्नी से ही मिली। निरालाजी को हिन्दी का कवि बनाने में और "श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी" को "निराला"जी बनाने में आपकी पत्नी का उतना हाथ हैं जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने का रत्नावली का।[8] हिन्दी को लेकर अपनी पत्नी की तुलना में अपनी हीनता जब सुर्जकुमार को अनुभूत हुई थी, तब आप सरस्वती की प्रतियां लेकर हिन्दी सीखने बैठे थे और आपने पद-साधना की थी।[9] सुर्जकुमार का हिन्दी प्रेम यहीं से गहन रूप धारण करता हैं।

आपका वैवाहिक जीवन अधिक दिनों तक नहीं चल सका। सन 1914 की लडाई शुरू हो गई थी। देश में महँगाई बढ रही थी। इसी साल कुआँर के महिने में मनोहरा देवी ने मायके में ही पुत्र को जन्म दिया। पुत्र का नाम रखा चि॰ रामकृष्ण। पंडित रामसहाय का शरीर शिथिल हो रहा था, पेट बढ गया था। महिषादल के अस्पताल में पंडित रामसहाय का आपरेशन हुआ। सन् 1917 में मनोहरा देवी ने दूसरी सन्तान, कन्या सरोज को जन्म दिया और उसी वर्ष पंडित रामसहाय त्रिपाठी का देहान्त हुआ।

सुर्जकुमार को अब अपने उत्तर दायित्व का बोध हुआ। बाप की नौकरी का विचार करके राजा सतीप्रसाद गर्ग ने सुर्जकुमार को अपने यहाँ नौकर रख लिया। एक दिन सुना लडाई बंद हो गई, अंग्रेज जीत गये। युरोप में लडाई खत्म होने पर भारत में महामारी फैली।

महिषादल में सुर्जकुमार को मनोहरा देवी की बीमारी का तार मिला। किन्तु जब आप डलमऊ पहुँचे तो आपकी पत्नी का शरीर राख बन चुका था।[10] मनोहरा देवी की मृत्यु से कवि में राग-विराग का अद्‌भूत मिश्रण हो गया। पत्नी की विरह-जन्य व्यथा कवि के लिए महान प्रेरणा-स्त्रोत हैं। स्नेह चुम्बन आज विष के प्याले बन गए हैं।[11] सुर्जकुमार 22 वर्ष की उम्र में विधुर हो गये थे। इस प्रकार चार वर्ष के रामकृष्ण और सालभर की सरोज को छोडकर मनोहरा देवी दूसरे संसार को चली गई।

सुर्जकुमार दोनों सन्तानों को उनकी नानी के पास छोडकर अपने गांव चले गये। आपके घर गढाकोला में आपके सामने ही चाचा, भाई (ताऊ के पुत्र) भाभी और उनकी बच्ची की मृत्यू हुई। आपके घर की मृत्यू-लीला समाप्त हुई। परिवार में रह गए सुर्जकुमार और आपके चार भतीजे, पुत्र और कन्या सरोज। जिन्दगी का यह दौर एक भयानक सपने जैसे था। सारा कुनबा ही उजड गया। सुर्जकुमार का घर उजड़ा-सा गया और आपके ऊपर अपने दो तथा चचेरे भाई के चार बच्चों के लालन-पालन का भार एक साथ आ पड़ा। अर्थोपार्जन की समस्या भयंकर रूप धारण करके आपके सामने आई। सुर्जकुमार के दुःख-दर्द, संघर्षो और अभावों की जो कहानी एक बार शुरू हुई वह अन्त तक चलती ही रही।

महिषादल राज्य की नौकरी आपसे अधिक नहीं चली। वहाँ से आप अपने घर वापस आ गये और गढाकोला तथा डलमऊ के सामाजिक धार्मिक तथा राजनीतिक जीवन में रूचि लेने लगे। परन्तु आपके सामने परिवार के भरण-पोषण की समस्या थी, और काम पाने के लिए आपको इधर-उधर भटकना पड़ा।

1·1·4 कलकत्ता के मतवाला का जीवन :-

सुर्जकुमारजी ने कुछ दिन कलकत्ता के रामकृष्ण मिशन में काम किया। सुर्जकुमारजी का नया जीवन आरम्भ हुआ - कवि का जीवन। प्रारम्भिक काल में "सरस्वती" से सुर्जकुमार की रचनाएँ भले ही वापस लौट आयी हो; परन्तु यह सर्वथा सत्य है कि सुर्जकुमार की वास्तविक परख आचार्य महावीर प्रसार द्विवेदीजी

ने ही की थी। कलकत्ता की विवेकानन्द सोसायटी से जब हिन्दी मासिक "समन्वय" निकलने का निश्चय हुआ, तो आचार्य द्विवेदीजी ने सुर्जकुमार का नाम बता दिया। "समन्वय" में रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द आदि के अद्वैतवादी दर्शन का गहरा मंथन एवं मनन कर इसी समय सुर्जकुमारजी ने अत्यन्त प्रौढ एवं विद्वत्ता प्रचुर दार्शनिक लेख लिखे थे। रामकृष्ण मिशन में सुर्जकुमार को बडी प्रतिष्ठा मिली। सुर्जकुमारजी ने "समन्वय" का सम्पादन कार्य दो वर्ष तक बडे सुरूचिपूर्ण ढंग से किया। दो वर्ष बाद आप "मतवाला" में आ गये। "मतवाला" हास्य-व्यंग प्रधान साहित्यिक साप्ताहिक था, इसके मण्डल में उस समय बाबू शिवपूजन सहाय मुंशी नवजादिक लाल, श्रीवास्तव भी थे और सम्पादक महादेव सेठजी थे।

बहुत सोच-विचार के बाद आपने अपना नया नाम रखा " सूर्यकान्त त्रिपाठी।[12] सूर्यकान्त त्रिपाठीजी ने सन 1923 में इसी पत्र "मतवाला" में "निराला" नाम से लिखना प्रारम्भ किया और तभी से आप इस नम से चिर प्रसिध्द हुए। उपनाम तो अनेक थे पर "निराला" नाम वास्तव में एकदम निराला था। निरालाजी के साहित्य ने इस नाम की सार्थकता को इतना सबल और सजीव बना दिया है कि उसके सामने सूर्यकान्त नाम भी नहीं ठहरता। हिन्दी काव्य का यह महा-ग्रह वस्तु तः "निराला" थे।[13]

"मतवाला" में निरालाजी की कविताओं का महत्व ही सबसे अधिक था, बल्कि कहना यह चाहिए कि, आपके बल पर "मतवाला" चल भी रहा था।[14] "मतवाला" काल निरालाजी के जीवन का स्वर्णकाल था। 'मतवाला" में भी आपने बहुत दिन काम नहीं किया, पर एक ही वर्ष में निरालाजी की प्रखर प्रतिभाने अपने अदम्य पावन-प्रवाह से हिन्दी जगत को प्लावित कर दिया। अब "मतवाला" मण्डल में आपका सम्मान कम हो गया और आपकी जगह ले ली उग्रजी ने। महादेव प्रसाद सेठजी से आपकी अनबन हो गयी और आपने हताश होकर "मतवाला" छोड दिया।

1·1·5 स्वामी विवेकानन्द का प्रभाव :-

"समन्वय" के सम्पादन के सन्दर्भ में निरालाजी का श्री रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्द के विचारधारा से गहन परिचय हुआ और इसका निरालाजी के जीवन, व्यक्तित्व और साहित्य पर दूर तक प्रभाव पडा। यहाँ निरालाजी को अध्यात्मिक और दार्शनिक वातावरण मिला। निरालाजी को स्वामी विवेकानन्द के विचारों में वेदान्तीय अव्दैतवाद का व्यावहारिक रूप भी देखने को मिला। विद्रोही, तेजस्वी स्वामी विवेकानन्द के चरित्र में निरालाजी को अपने व्यक्तित्व का समर्थन प्राप्त हुआ।[15] तेजस्विता और दूसरों को दुःखी देखकर विकल होना तथा विपत्ति में धैर्य न छोडते हुए भी निर्विकार चित्त से कर्तव्य करते जाने की प्रेरणा निरालाजी की साधन को स्वामी विवेकानन्द के चरित्र से मिली।

निरालाजी स्वयं भी विवेकानन्द और अपने आपमें बडी समता देखते थे बाह्य आकार में भी और विचारों में भी। आपका कथन है, "जब मैं बोलता हूँ तो यह मत समझो निराला बोल रहा है। तब समझो, मेरे भीतर से विवेकानन्द बोल रहे हैं। यह तो तुम जानते हो कि मैंने विवेकानन्द का सारा "वर्क" हजम कर लिया है। जब इस प्रकार की बात मेरे अन्दर से निकलती है, तो समझो, यह विवेकानन्द बोलता है।[16]

निरालाजी ने पूर्ण रूप से स्वामी विवेकानन्द का अपने व्यक्तित्व पर प्रभाव स्वीकार किया है। स्वामी विवेकानन्द को जब अपने भाषणों के पश्चात यथेष्ठ धन प्राप्त हो जाता तो वे उसे पाने के पहिले ही दान कर दिया करते थे।[17] निरालाजी ने भी कवि सम्मेलनों आदिसे प्राप्त धन का हाथों में आने के पहले ही विभिन्न संस्थाओं को दान कर दिया है।[18] निरालाजी के काव्य संग्रह "अपरा" पर उत्तरप्रदेश सरकार ने 2,100 रूपयों का पुरस्कार दिया और निरालाजी ने उसका दान भी किया।

स्वामी विवेकानन्द के वेदान्त के दोनों स्वरूप निरालाजी के व्यक्तित्व में घटित होते हैं। वीरता के प्रतिष्ठा के लिए स्वामी विवेकानन्द ने बंगाल में

महावीर की पूजा प्रचलित कराई थी और निरालाजी प्रारम्भ से ही हनुमान के भक्त रहे हैं। यह अलग बात है कि स्वामीजी का कार्य धार्मिक नेता का, दार्शनिक प्रचारक का था और निरालाजी का क्षेत्र काव्य साहित्य रहा। कदाचित इसीलिए निरालाजी को स्वामी विवेकानन्द का साहित्यिक प्रतिनिधि कहा गया है।[19] स्वामी विवेकानन्द और निरालाजी के व्यक्तित्व की इस समता के साथ विषमताएँ भी एकाधिक होंगी और हैं भी, लेकिन यह समता कहीं अधिक आकर्षक है।

परमहंस की तरह निरालाजी की भावसाधन की तल्लीनता के भी एकाधिक उल्लेख मिलते हैं। निरालाजी में जो स्वाभाविक दृढ़ता और औदार्य था उसे यहाँ दार्शनिक आधार मिलता है। यह आपके व्यक्तित्व को जहाँ अप्रतिम बनाता है वहीं आपके काव्य को भी मौलिक व्यापकता और बौध्दिक आधार देता है। महादेवी वर्माजी ने कहा है कि, "आपकी दृष्टि में दर्प और विश्वास की धूपछांही आभा है। इस दर्प का सम्बन्ध किसी हलकी मनोवृत्ति से नहीं और न उसे अहं का सस्ता प्रकाशन माना जा सकता है।

1·1·6 पुत्री सरोज की मृत्यु का निरालाजी के कवि जीवन पर प्रभाव :-

जिस तीव्र दुखानुभूति का प्रारम्भ कवि की माता, पिता, पत्नी तथा अन्य परिजनों की मृत्यु से हुआ था, उसकी चरम परिणति थी सरोज की मृत्यु। सरोज की असामायिक मृत्यु के आघात से निरालाजी का निराश हृदय शत-विक्षत हो गया। सरोज लगभग ढाई वर्ष तक राज यक्ष्मा की असहाय वेदना को भोगती रही और निरालाजी उसका उपचार कराने में भी असमर्थ रहे। विवश कवि ने अपनी बेटी को तडप-तडप कर मरते देखा। साहित्यिक विरोधों और आर्थिक संकटों को निरालाजी किसी तरह सह गये, किन्तु सरोज की मृत्यु का प्रभाव आपके जीवन पर दूर तक सिध्द हुआ। सरोज की मृत्यु पर लिखा गया शोक-गीत "सरोज-स्मृति" निरालाजी की व्यथा भरी लघु आत्मकथा है। इस शोक गीत में कविने अपने शोकाकुल जीवन का पुनर्निरीक्षण किया है।

1·1·7 सामाजिक मूल्यों के आख्याता :-

निरालाजी की इस रचना में काव्य के मर्म के साथ कवि का उज्ज्वल व्यक्तित्व भी अपनी सामाजिक प्रतिक्रियाओं के साथ व्यक्त हुआ है। व्यथा का इतना प्रगाढ प्रकाशन सामान्यतः युग के किसी अन्य कृति में नहीं देखा गया।

केवल सैध्दांतिक धरातल पर ही नहीं अपितु व्यावहारिक रूप से नये स्वस्थ सामाजिक मूल्यों के लिए निरालाजी संघर्षशील रहे। आपने इस विश्व मानवतावादी दृष्टिकोण को अन्तर्गत व्यक्तित्व का प्रसार, मानव को उच्चता और ब्रह्मत्व प्रदान करने की भावना, नारी का सामाजिक महत्व और उसकी स्वतन्त्रता का प्रतिपादन, नारी को शक्ति समझने की भावना, स्वतन्त्र प्रेम भावना का समर्थन, सामाजिक कुरीतियों जाति-पाति और दहेज प्रथा आदिका विरोध, पूँजिपतियों और जमीदारों द्वारा किसानों और श्रमिकों के शोषण का विरोध, जीवन में त्याग और भोग का सामंजस्य, नवीनता के प्रति आग्रह, जीवन में आशा, आस्था और अपराजेयता का संचार, शाश्वत प्रेम और सौन्दर्य की भावना, समाज में साहित्यकार के गौरव की स्थापना आदि पर विशेष बल दिया है।[20] निश्चित ही निरालाजी का व्यक्तित्व असाधारण और विराट था और आपके व्यक्तित्व की यह असाधारणता, विराटता और मानवतावादी दृष्टि आपके काव्य और साहित्य में भी प्रतिफलित हुई।

1·1·8 क्रांतिकारी और विद्रोही :-

निरालाजी का अहम् साधारण अहम नहीं, आप वेदान्तिक अद्वैतवादी थे। निरालाजी में निर्भयता की भावना सर्वत्र पाई जाती थी, जिसे हम आपके व्यक्तित्व की एक बहुत बडी बात मानते हैं। निरालाजो के आत्मसम्मान को लोग अहंकार समझते रहे। परन्तु निरालाजी का अहंकार व्यक्तिगत अहंकार कभी नहीं था, आप बोलते तब समस्त हिन्दी साहित्य और साहित्यकारों की ओर से बोलते।[21]

अविराम विद्रोह की भावना निरालाजी के साहित्य और जीवन में परिव्याप्त है। आपका सारा साहित्यिक तथा सामाजिक जीवन विद्रोह से भरा हुआ है। यह विद्रोह वृत्ति ही निरालाजी के काव्य का केन्द्रीय बिन्दु है। आप हिन्दी के आधुनिक

युग के कबीर थे।[22] निरालाजी के व्यक्तित्व की पौरूषगत अपराजेयता ने विद्रोह के साथ मिलकर निरालाजी के काव्य को औदात्य और महानता प्रदान की है। इसीलिए निरालाजी का काव्य जीने की प्रेरणा देता है। निरालाजी के इस बहुमुखी विद्रोह का कारण मूल रूप में आपका व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन है।

व्यक्तित्व की छाप लेखक की शैली तथा विचारधारा दोनों पर पडती है। निरालाजी की विचारधारा मूलतः क्रांतिकारी है। साहित्यिक, दार्शनिक, राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में आपके विचार एक नवीन उन्मेष, नई उत्तेजना लेकर आते हैं। किसी भी स्थान पर आपके विचारों को देखकर आपकी क्रांतिकारीता का परिचय प्राप्त किया जा सकता है।

1·1·9 राजनीति और निरालाजी :-

निरालाजी का यद्यपि सक्रिय रूप से राजनीति से सम्बन्ध नहीं रहा। निरालाजी की विशेषता यह है कि आपने साम्राज्यवाद के आर्थिक शोषण, राजनीति के दाँवपेच और सांस्कृतिक नीति का गहराई से विश्लेषण किया। साहित्य सृजन के साथ-साथ निरालाजी ने अपने युग की राजनीति में भी बराबर भाग लिया है। निरालाजी ने राजनीतिक दासता और सामाजिक रूढियों के प्रति सदैव विद्रोह किया है। निरालाजी साहित्यकार को राजनीतिक से कम नहीं मानते। निरालाजी ने राजनीतिज्ञों पर करारे व्यंग्य किये हैं। निरालाजी जीवन में बहुत बडे आशावादी भी थे इसलिए नेताओं की स्थिति पर क्षोभ प्रकट करते हुए भी आपने लिखा है, "अवश्य वह युग आयेगा। हमें यथाशक्ति सत्य का उपहास न करते रहना चाहिए। इस भावना से भरा हुआ कोई भी कार्य साम्यस्थिति के लिए कोई भी विचार अपूर्ण न रहेगा क्योंकि -

"स्वलपमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्"।[23]

साहित्यकार के समाज में स्थान के लिए और हिन्दी की स्थापना के लिए आपने आजीवन प्रयास किया। इसके लिए आप महात्मा गांधी, पंडित जवाहरलाल

नेहरू आदि महान नेताओं से भी निर्भयता पूर्वक मिले और उन्हें हिन्दी के महत्व से अवगत किया। इस प्रकार राजनीति में भी आप अपने विचारों का प्रचार करते जाते थे, देश के कर्णधारों को समझाते जाते थे, पर यह भी ठीक है कि दुर्भाग्य की चक्की में पडा देश निरालाजी के अनूल्य विचारों का महत्व नहीं समझ सका।

राजनीति ही नहीं धर्म के ढोंग पर भी निरालाजी ने कठोर से कठोर व्यंग्य किये हैं और वास्तविक धर्म का स्वरूप जनता के सामने रखा है। धार्मिक आडम्बरों से आपको घृणा है। धर्म के बाहरी विधानों को लक्ष्य कर आपने कडे व्यंग्य किये हैं। देश की धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विकृतियों की कडी से कडी आलोचना करते हुए भी निरालाजी ने इनके सुधार की समस्याओं के हल के समय सब दिन अपनी प्रसन्नता जाहिर की है।

निरालाजी ने सदैव नवीनता के दृष्टिकोण से ही काव्य रचना की है। नवीनता की इसी प्रवृत्ति ने आपके युग में आपके स्वतन्त्र व्यक्तित्व की स्थापना की। निरालाजी में जनसाधारण के प्रति गहरी ममता थी। इसी कारण आपके काव्य में जनजीवन का सजीवन वर्णन मिलता है और काव्य की विषय भूमि भी व्यापक बन सकी।

भारतीय साहित्य में छायावाद युग अपनी एक विशेष प्रकार की ऐतिहासिक महत्ता रखता है। जिन सामाजिक परिस्थितियों के कारण छायावाद का उदय हुआ था उससे निरालाजी का निकट सम्पर्क रहा, इसलिए उसके विकास के साथ आप बराबर चलते रहे। वस्तुतः छायावादी कोरी कल्पना का आपमें अभाव था। छायावादी मुक्त-रचनाओं और गीतों में सौन्दर्य शक्ति का समावेश सर्वप्रथम निरालाजी ने ही किया। प्राचीन छन्द कविता को समयानुकूल बनाकर जीवन के साथ साहित्य के विकास का शीलान्यास करने में आप सबसे आगे रहे।[24] उन्मुक्त छन्दों का स्वच्छन्द प्रवाह और स्वर के सधे संगीतमय लहरित भाव का समन्वय निरालाजी की ही लेखनी का निरालापन है।[25]

1·1·10 निरालाजी का पौरूष :-

निरालाजी शक्ति के उपासक होने का प्रमाण भी आपके पौरूष और वीर भाव को पुष्ट करता है। क्योंकि पुरूष ही शक्ति की उपासना और सिध्दि कर सकता है। निरालाजी स्वयं भी पौरूष की मूर्ति थे। आपका काव्य आपके व्यक्तित्व के अनुरूप पुरूष काव्य है। निरालाजी भोग में भी विश्वास करते हैं। निरालाजी पुरूष कवि हैं तथा इस नाते आपने नारी सौन्दर्य के मांसल चित्र, "स्फटिक-शीला", "खजोहरा" और "जुही की कली" आदि कविताओं में स्पष्ट रूप से रखे हैं। अन्य छायावादी कवियों ने स्पष्ट रूप से अपनी लैंगिक चेतना को व्यक्त नहीं किया है किन्तु निरालाजी जीवन की भाँति काव्य में भी भोग-सम्भोग और शृंगार के हामी है। पत्नी की मृत्यु के पश्चात निरालीजी कभी-कभी आधी रात के समय भी श्मशान में विचरणा किया करते थे, यह आपके पौरूष का प्रमाण ही माना जाएगा।

आप जीवन के अन्त तक गहरी अस्तिकता में विश्वास करते रहे। हम पहले कह चुके है कि, आपने "हनुमान चालिसा" और "रामचरितमानस" के पारायण किये हैं। इस प्रकार आप भक्ति और दर्शन की ओर बचपन से ही आकृष्ट हो गये थे तथा आपमें ये संस्कार गहरी जडे जमा चुके थे। निरालाजी शक्ति या काली और सरस्वती के भी उपासक थे। आप निरन्तर काली या शक्ति का व्रत भी रखा करते थे। निरालाजी ने साहित्य में भक्ति संबंधी और दार्शनिक रचनाओं का सर्जन प्रारंभ से ही कर दिया था। इस दृष्टिकोण से "परिमल" की भक्ति सम्बन्धी रचना "खेवा" और अन्य दार्शनिक रचनाएँ "कण", "जागरण" आदि महत्वपूर्ण है।

इतना निश्चित हैं कि अब निरालाजी चिंतन और दर्शन के क्षेत्र में प्रौढता की ओर अग्रसर हो रहे थे। दर्शन और भक्ति की ओर स्वभाव से ही उन्मुख होने के कारण ही निरालाजी जीवन में कटु संघर्षो के विष का पान कर गये। दु:ख, अविराम संघर्ष तथा अपने चिंतन और भक्ति के कारण ही निरालाजी इतना महान काव्य और साहित्य हिन्दी को दे पाये।[26]

1·1·11 जीवन के अंतिम दिन :-

अपने जीवन के अंतिम वर्षों में आप मानसिक रूप से अधिक असंतुलित हो गये थे तथा शारीरीक स्थिति भी अत्याधिक रूग्ण हो गई थी। निरन्तर संघर्षों , अभावों और दुःखों से जूझते रहने के कारण आपका मस्तिष्क कुछ असंतुलित हो गया था। डॉक्टरों ने भी आपको मानसिक रोगी बतलाया था।[27] आप हार्निया के भी पुराने रोगी थे और आपका उदर और यकृत भी विकृत हो चला था। आप मृत्यु से लड रहे थे और भीतर से टूट रहे थे। आप जानते थे जीतेगी मृत्यु, पर आपके रोग-जर्जर शरीर को परास्त करना आसान न था।

1·1·12 निरालाजी का देहावसान :-

हिन्दी साहित्य के भीष्म पितामह निरालाजी के पार्थिव शरीर का अवसान दीर्घकालीन अस्वस्थता के उपरान्त 15 अक्तूबर 1961 को प्रातः दस बजकर तेईस मिनट पर चित्रकार कमला शंकर के छोटे से कमरे में दारागंज, प्रयाग में हुआ। "मुख पर कष्ट था विकारों की भीगिमा नहीं थी और न कोई अंग ही टेढ़ा हुआ था। ऐसा लगता जैसे जीवन भर संघर्षो और कठिनाईयों से जूझनेवाले उस महान साहसी एवं अदम्य योध्दा ने मृत्यु का स्वयं ही वरण करके चिरशांति की गोद में अखण्ड निद्रा ले ली हो।[28]

कवि निरालाजी के निधन पर जितनी गहरी प्रतिक्रिया भारत और समस्त संसार में हुई, उतनी हिन्दी के किसी अन्य कवि के निधन पर इससे पूर्व न हुई थी। निरालाजी की महाप्राणता और महानता इसमें है कि आप इतने अधिक आघातों को सह गए और पागल न हो गए। इतनी वेदना सहकर भी आपने हिन्दी साहित्य को इतनी महान देन दी। निरालाजी जैसा साहित्यकार हर भाषा और हर देश में पैदा नहीं होता।

निरालाजी ने अपने व्यक्तित्व और जीवन के प्रति जितना भारतीय जनता को आकर्षित किया, उतना किसी और दूसरे कवि ने नहीं। आपके जीवन काल में आपकी जितनी चर्चा रहती थी, उससे अधिक आपकी मृत्यु के उपरान्त हुई।

अन्य प्रान्तीय पत्रों एवं पत्रिकाओं में और जन-साधारण में जितनी निरालाजी की मृत्यू पर प्रतिक्रिया हुई और सामग्री प्रकाशित हुई, उतनी किसी अन्य हिन्दी कवि की मृत्यु पर कभी नहीं हुई।[29]

भारत के सभी अहिन्दी भाषा-भाषी प्रदेश में शोक-सभाओं का आयोजन किया गया और सभी प्रदेशों की प्रसिध्द पत्र-पत्रिकाओं में आप पर कविताएँ व लेख छपे। जनसाधारण से लेकर राष्ट्रपति तक ने आपको श्रध्दांजली अर्पित की।

1·2 निराला का साहित्य :-

बीसवी सदी के प्रारंभिक बीस वर्षो में हिन्दी का शायद कोई साहित्यकार हो जिसके विकास में थोडा बहुत आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजी का हाथ न रहा हो। भारतेन्दु हरिश्चंद्रजी के बाद हिन्दी में किसी व्यक्ति का इतना सम्मान नहीं हुआ जितना आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजी का। सन 1920 में जब सूर्यकान्त त्रिपाठीजी ने "सरस्वती" को अपनी पहली गद्य रचना भेजी, तब आचार्य द्विवेजी जी संपादन काल से अवकाश लेकर अपने गांव चले गये थे।

सूर्यकान्त त्रिपाठीजी और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजी में बहुत सी बातें समान थी। सूर्यकान्त त्रिपाठीजी के समान आचार्य द्विवेदीजी के संस्कार मूलतः बैसवाडे के किसान के थे। व्यक्तित्व की सादगी के अलावा सूर्यकान्त त्रिपाठीजी के मन पर आचार्य द्विवेदोजी की विद्वता की गहरी छाप पडी। इसी बीच आपने दुःखी जीवन के अनुभवों को वेदान्त से मिलाते हुए आपने एक कविता लिखी -जब कही मोर बडी दिल हिल गया" कविता कानपुर की "प्रभा" में छाप गई।[30]

स्वामी माधवानंदजी ने अपने पत्र का नाम रखा था "समन्वय"। सूर्यकान्त त्रिपाठीजी ने बडे परिश्रम से एक लेख लिखा "भारत में श्री रामकृष्णावतार"। दार्शनिक विषय पर यह पहला लेख था, संन्यासियों के पत्र में छपने जा रहा था, इससे सूर्यकान्त त्रिपाठीजी की मौलिक प्रतिभा का प्रमाण होना ही था। कलकत्ता के रामकृष्ण मिशन के संन्यासियों को सूर्यकान्य त्रिपाठीजी का लेख पसन्द आया। सूर्यकान्त त्रिपाठीजी

के आने से पहले ही "समन्वय" धर्म और दर्शन के साथ साहित्य की भी सेवा करने लगा था। आप बंगला लेखों का अनुवाद करते, टिप्पणियाँ लिखते, जब-तब "समन्वय" में अपनी कविताएँ भी प्रकाशित करते। आपने एक कविता लिखी "अधिवास"। इसमें आपने अपने मन की शंकाएँ प्रकट की। यह कविता सूर्यकान्त त्रिपाठीजी ने "सरस्वती" में छपने भेजी। परन्तु वह कविता सह धन्यवाद वापस भेज दी।

सूर्यकान्य त्रिपाठीजी की जान-पहचान अब हिन्दी लेखक शिवपूजन सहायजी से हुई। शिवपूजन सहायजी को मालूम हुआ कि "अधिवास" कविता "सरस्वती" से वापस आ गई है तो उन्होंने उसे "माधुरी" में छपने के लिए उसके संपादक रूपनारायण पाण्डेयजी के पास भेज दिया।

कविता के एक चरण को आधार बनाकर आपने वर्णिक मुक्त छंद में "पञ्चवटी प्रसंग" कविता लिखी। आपने निषेध भावनाएँ दूर करके एक कविता लिख डाली-नाम रखा "जुही की कली"। शिवपूजन सहायजी ने "जूही की कली" कविता अपने "आदर्श" नामक पत्र में प्रकाशित की। शिवपूजन सहायजी, मुंशीजी, महादेव सेठजी और निरालाजी इन सबने मिल कर एक पत्र निकाला, जिसका नाम मुंशीजी ने "मतवाला" रखा। "मतवाला" हास्य रस का पत्र था। "मतवाला" के अठारहवे अंक (22 दिसम्बर 1923) में "जुही की कली" कविता छपी जिसके नीचे पंडित सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" लिखा था। पर कुछ अंकों के बाद निरालाजी की अपनी शैली निखर उठी।

निरालाजी की प्रसिध्दी का समय छायावादी कविता का अभ्युदय काल था। निरालाजी और सुमित्रानन्दन पंतजी इन दोनों कवियों ने कविता के क्षेत्र में खडींबोली को पूरी तरह प्रतिष्ठित कर दिया। सालभर तक "मतवाला" में निरालाजी की कवितायें छपती रहीं। इनमें बहुत सी कविताएं सामाजिक विषयों पर थी, कुछ प्रकृति संबंधी, कुछ शृंगार परक जैसी कविता, कुछ प्रतीकों के माध्यम से मानव जीवन के विभिन्न पक्षों पर कवि के भाव प्रदर्शित करती थी। निरालाजी जो आलोचनात्मक

निबंध लिख रहे थे, आप छायावादी आंदोलन को आगे बढानेवाले और उसे भक्ति प्रदान करने वाले थे। निरालाजी की कविता के साथ ही छायावादी आलोचना का भी जन्म हुआ।[31]

निरालाजी ने अपना पहला कविता संग्रह "अनामिका" का प्रकाशन "मतवाला" में किया। "मतवाला" के पहले अंक में ही "अनामिका" का जोरदार विज्ञापन निकला था। जिसके कारण निरालाजी नई धारा के एक प्रतिनिधी कवि के रूप में विख्यात हो चले थे। निरालाजी सन 29 में "सुधा" के संपादकीय विभाग में आ जाने के बाद आपने राजनीतिक, सांस्कृतिक विषयों पर अपने विचार अनेक बार पहले की अपेक्षा अधिक बार व्यक्त किए। "सुधा" इस समय छायावाद पर आक्रमण करने में सबसे आगे था। "सुधा" में निरालाजी ने राष्ट्रीय आन्दोलन को शक्तिशाली बनाने, अंग्रेजी की जगह भारतीय भाषाओं का व्यवहार करने, बंगला साहित्य के समान्तर हिन्दी साहित्य के विकास के लिए अनवरत संघर्ष किया। निरालाजी ने "सुधा" को हिन्दी की श्रेष्ठ साहित्यिक, सामाजिक पत्रिका बना दिया।

1·2·1 निराला का काव्य साहित्य :-

कवि और उसके काव्य का विवेचन और मूल्यांकन कई स्तरों पर किया जा सकता है। हिन्दी के आधुनिक युग के कुछ विशिष्ठ कवियों के संबंध में हिन्दी समीक्षकों ने जो विवेचन किये हैं उनके फलस्वरूप उन कवियों की एक विशिष्ठ मानरेखा हिन्दी साहित्य में बन चुकी हैं। कवि निरालाजी के काव्य के सम्बन्ध में भी युगीन समीक्षकों की प्रतिक्रियाएँ बहुत-कुछ परिणत स्थिति में पहुँच चुकी है, परन्तु कदाचित वे उतनी परिणत नहीं हैं जितनी अपेक्षित हैं। निरालाजी का कवि व्यक्तित्व इतनी बहुमुखी सृष्टियों का आधार है, और आपके काव्य में इतनी अनेक रूपता है कि, आपका समग्र समीक्षण उतना आसान नहीं रहा है।

काव्य-कृतियाँ

अनामिका (प्रथम) :-

महादेव प्रसाद सेठजी तथा मुंशी नवजादिकलाल श्रीवास्तवजी की प्रेरणा से "अनामिका" नामक 40 पृष्ठों की पुस्तक का प्रकाशन "मतवाला" में सन 1923 में हुआ। निरालाजी की इस सर्वप्रथम कृति का आधुनिक हिन्दी काव्य के इतिहास एवं स्वयं कवि निरालाजी की काव्य कला के विकास में विशेष महत्व है। प्रस्तुत कृति में स्वच्छन्द, छायावादी जीवन दृष्टि, मुक्त छन्दोविधान, नवीन अभिव्यंजना शिल्प आदि नवीन क्रांति के उद्घोषक हैं। प्रस्तुत कृति में कुल 9 रचनाओं का समावेश है। "अनामिका" में निरालाजी भारतीय संस्कृति के आख्याता के रूप में प्रतिष्ठित हैं। "अनामिका" की रचनाओं से हमें निरालाजी के भावी कृतित्व का पूर्वाभास मिलता है।

परिमल

सन 1930 में निरालाजी का दूसरा काव्यसंग्रह "परिमल" प्रकाशित हुआ। "परिमल" के नामकरण की पृष्ठभूमि में भी युवा कवि निरालाजी की रागात्मक वृत्ति दिखाई देती है। "परिमल" प्रणय का प्रतीक है। सन 1924 से सन 1927 तक "मतवाला" काल में निरालाजी ने जिन कविताओं का सृजन किया, उनका संग्रह यह है। प्रस्तुत संग्रह की 78 कविताओं को कविने तीन खण्डों में प्रस्तुत किया है। प्रथम खण्ड में सममात्रिक सान्त्यानुप्रास कविताएँ, दूसरे खण्ड में विषम मात्रिक सान्त्यनुप्रास कविताएँ एवं तीसरे खण्ड में स्वच्छन्द छन्द में लिखित कविताएँ हैं। निरालाजी ने "परिमल" में अपने विविध दिशा व्यापी विशाल व्यक्तित्व का प्रक्षेप करके छायावाद को भी विस्तृत आधारभूमि और व्यापक पट प्रदान किया। विविध विषयों के समावेश के कारण भी हमने आगे "परिमल" को छायावाद की प्रतिनिधि कृति माना है।[32] इसमें प्रथम संग्रह "अनामिका" की सात रचनाएँ हैं। इस दृष्टि से प्रस्तुत कृति को निरालाजी की प्रथम प्रतिनिधि कृति कहना समीचीन प्रतीत होता है।[33] "परिमल" की भावभूमि का ही विकास "गीतिका" में हुआ है।

गीतिका

"गीतिका" का प्रकाशन सन 1936 में हुआ। "गीतिका" निरालाजी की गीत-सृष्टि हैं। निरालाजी गीत-सृष्टि को शाश्वत मानते हैं। स्वर-संगीत को आप आनन्द मानते हैं। आपने आनन्द को ही इसकी उत्पत्ति, स्थिति और परिसमाप्ति माना हैं। निरालाजी ने "गीतिका" की रचना विशिष्ठ प्रयोजन को ध्यान में रखकर की हैं। वह प्रयोजन है - अभिनव सांगीतिक प्रयोगों द्वारा "गीतिका" के गीत काव्य में एक नवीन क्रांति करना।[34] "गीतिका" में लगभग 101 गीत हैं, जो विविध भावों से रचे गये हैं। "गीतिका" के गीतों में एक प्रकार की उदात्तता, पवित्रता और मधुरिमा तथा प्रकाश हैं। निरालाजी एक नवीन, आधुनिकतम और व्यापक सौन्दर्य चेतना को "गीतिका" के माध्यम से प्रस्तुत कर सके। "गीतिका" के प्रत्येक गीत में गहरी अर्थवत्ता एवं उच्च कोटि की कला हैं। प्रेम, प्रकृति, सौन्दर्य और आत्मा के शाश्वत गीतों का यह संग्रह कविने अपनी पत्नी श्रीमती मनोहरा देवी को समर्पित किया हैं।

अनामिका (द्वितीय)

"अनामिका" (द्वितीय) का प्रकाशन काल सन 1938 हैं। "अनामिका" (प्रथम) की कोई भी रचना इस कृति में नहीं आई, किन्तु फिर भी उसी आधार पर कविने अपने इस काव्य-संग्रह का नाम "अनामिका" रखा। इसके दो कारण थे - एक तो कवि अपनी इस नाम की प्रथम कृति को स्मृति को सुरक्षित रखना चाहता था, दूसरा महादेव प्रसाद सेठजी से गहन रागात्मक संबंध होने के कारण कवि उनकी स्मृति को भी इस कृति द्वारा पुनरूज्जीवित करना चाहता था।[35] इस संग्रह में निरालाजी की 56 कविताएँ संकलित है जिसे मोटे रूप में दो खण्डो में बाँट सकते हैं - रूपांतरित और मौलिक।

"अनामिका" (द्वितीय) की प्रायः सभी दार्शनिक कविताएँ चिंतन की उच्च भूमिका पर निर्मित हैं। व्यक्तिगत जीवन की असफलताओं एवं सामाजिक निष्ठुरता के कारण इनमें निराशावादी स्वर मुखर हुआ हैं। "अनामिका" (द्वितीय) की कविताएँ

अपेक्षाकृत अधिक लम्बी हैं। "अनामिका" (द्वितीय) में विषयगत विविधता, कलागत प्रौंजलता, व्यापकता, महाकाव्य का औदात्य, नवीन प्रगति और प्रयोग, निरालाजी की व्यापक जीवन दृष्टि और व्यापक अस्खलित, स्वच्छन्द और महान व्यक्तित्व सभी कुछ है। प्रा॰धनंजय वर्माजी का यह कथन सही प्रतीत होता हैं,, "जिस तरह प्रसाद की स्थायी कीर्ति का स्तम्भ "कामायनी" है, उसी तरह निरालाजी की स्थायी कीर्ति "अनामिका" से मानी जाएगी।···· अब तक आपकी काव्य कला, अनुभूति और अभिव्यक्ति पूर्ण प्रौढ हो चुकती हैं। ····· सम्पूर्ण निरालाजी "अनामिका" में देखे जा सकते हैं।[36] "अनामिका" (द्वितीय) की अधिकांश कविताओं में संस्कृत-गर्भित क्लिष्ट भाषा का प्रयोग हुआ हैं। "सरोज-स्मृति" और "राम की शक्ति पूजा" निरालाजी की "अनामिका" (द्वितीय) की दो सर्वोत्कृष्ठ रचनाएँ हैं।

तुलसीदास

"तुलसीदास" का प्रकाशन काल सन 1938 हैं। "तुलसीदास" एक सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक खण्डकाव्य हैं। आकार में खण्डकाव्य होते हुए भी यह महाकाव्य के औदात्य से अभिमण्डित हैं - यह तुलसीदास का वैशिष्टय हैं। विविध मोडों और नाटकीयता से युक्त इस महाकाव्यात्मक उदात्तता को चित्रित करनेवाली कृति में अनेक विशेषताएँ हैं। इतिहास, युग, दार्शनिकता के तीन पहलुओं पर इस कृति में कथावस्तु की विरलता एवं अन्तर्द्वन्द की विशदता व्याप्त हैं। कुल एक सौ छन्दों के इस प्रबंध काव्य में महाकवि तुलसीदास का जीवन घटित हैं। "तुलसीदास" के प्रथम भाग में भारतीय संस्कृति के पतन तथा तुलसीदास का जन्म आदि का चित्रण, द्वितीय भाग में तुलसीदास को प्रकृति द्वारा देश को ज्ञान-दान देने की प्रेरणा मिलना तथा उनकी पत्नी के प्रति आसक्ति और अंतिम भाग में पत्नी की फटकार पर भोग से विरक्त हो, राम के प्रति उन्मुख होने की कहानी हैं। "तुलसीदास" की भाषा संस्कृत प्रचुर और कुछ क्लिष्ट भी हैं। फिर भी उसमें ओज है, प्रवाह हैं। इस कृति में निरालाजी का शब्दविन्यास अपने ढंग का अनोखा था।

कुकुरमुत्ता :-

निरालाजी की पूर्वकृतियों से नितान्त भिन्न, सर्वाधिक विवाद एवं आपकी रचना-प्रक्रिया के परिवर्तन की सूचक रचना है "कुकुरमुत्ता"। "कुकुरमुत्ता" का प्रथम प्रकाशन सन 1942 में हुआ। इसका द्वितीय संस्करण सन 1952 में प्रकाशित हुआ। इस प्रकार प्रस्तुत कृति "कुकुरमुत्ता" नामक लम्बी कविता की कृति बन गई। "कुकुरमुत्ता" में निरालाजी की गहरी प्रतिक्रिया और गहरी व्यंजना सामने आती हैं। "कुकुरमुत्ता" में नवीन सामाजिक चेतना, मौलिक विचारधारा, यथार्थदृष्टि, व्यापक प्रतिक्रिया और जीवन की अनेकमुखी असंतुलित स्थितियों और दशाओं पर चूभता हुआ व्यंग्य, एक सर्वथा नई किन्तु विषयानुरूप शैली में प्रस्तुत है। इस रचना में "गुलाब" और "कुकुरमुत्ता" की बातचीत का वर्णन है। ये दोनों ही प्रतीक रूप में हैं। दूधनाथ सिंहजी मानते हैं कि, यह विषय-वस्तु शिल्प-संघटन, भाषिक संरचना, व्यंग्य और हास्य इन सभी दृष्टियों से एक सर्वथा विद्रोही, आधुनिक और महत्वपूर्ण कृति है। इसमें काव्य अभिजात्य से मुक्ति का सफल प्रयास दीख पडता है।[37]

अणिमा

सन 1943 में निरालाजी का सातवाँ काव्य-संग्रह "अणिमा" प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 45 रचनाएँ संग्रहित हैं। "अणिमा" की रचना की पृष्ठभूमि को समझने के लिए एक ओर हमें द्वितीय विश्वयुध्द के समय की भारत की स्थिति तथा दूसरी ओर निरालाजी की वयसंगत विभ्रांति, आर्थिक दुरावस्था और मानसिक और शारीरिक दु:ख पर दृष्टि केन्द्रीत करनी होगी। "अणिमा" गीतों का संग्रह हैं। "अणिमा" के अनेक गीतो में एकाकी कवि-हृदय के करूण उद्‌गार हैं। "अणिमा" में विवाद का वातावरण भी प्रगाढ है। "अणिमा" का प्रशस्ति-अंकन और सम्बोधित गीतों का रूप वर्णनात्मक हैं। "अणिमा" में गीतों के अतिरिक्त समस्त कविताएँ वर्णनात्मक, इतिवृत्तात्मक और शुष्क तक बन्दी सी लगती है, जिनमें गद्यात्मकता भी आती है। इस संग्रह की प्रशस्ति कविताओं में महान आत्माओं के प्रति कवि का आदर और श्रध्दा का भाव भी झलकता है।

बेला

"बेला" का प्रकाशन सन 1946 में हुआ। "बेला" की विषय परिधि व्यापक है, विशेष कर ऊर्दू की शैली पर प्रेम संबंधी कविता लिखी है। निरालाजी पर ऊर्दू और फारसी भाषा का विशेष प्रभाव "बेला" में दिखाई देता है, इसमें अलग-अलग बहरों की गजलें हैं, जिनमें निरालाजी ने फारसी के छन्दः शास्त्र का निर्वाह किया है।[38] वस्तुतः निरालाजी "बेला" में हिन्दी की शैली में नया परिष्कार लाना चाहते थे। इसलिए आप ऊर्दू की गजलों और फारसी के छन्दःशास्त्र को लेकर हिन्दी में आये। "बेला" में विनय संबंधी, प्रवृत्ति परक, शृंगारिक, दार्शनिक, व्यंग्यात्मक, विनोदपूर्ण, सामाजिक तथा राष्ट्रीय भावधारा का वहन करने वाली तथा रहस्यवादी कविताएँ हैं। "बेला" में कुल 95 कविताएँ हैं।

अपरा

"अपरा" काव्य-संग्रह सन 1946 में साहित्यकार संसद द्वारा प्रकाशित हुआ। "अपरा" में निरालाजी के सभी तरह के पद्य संग्रहित थे। सन 1916 से लेकर सन 1943 तक की प्रायः सभी सुन्दर कविताओं का इसमें संकलन किया गया है। महादेवी वर्माजी ने इस संग्रह में सहयोग दिया था, जो अपने ढंग का अकेला काव्य-संग्रह है। इस काव्य संग्रह को उत्तर प्रदेश सरकार ने 2,100 रूपयों का पुरस्कार दिया है। इस संग्रह में कुल 79 संकलित कविताएँ हैं।

नये पत्ते

"नये पत्ते" का प्रकाशन सन 1946 में हुआ। "नये पत्ते" में निरालाजी जनजीवन के कवि हैं। जीवन की यथार्थ भूमियों का आकलन नए प्रतीकों और प्रतिमानों से हुआ है और जनवादी काव्य का नया परिवेश यहाँ मिलता है। "नये पत्ते" में निरालाजी की चेतना सामाजिक है, बाह्योन्मुखी है और समाज शास्त्रीय है। जो कला "विट" पर आधारित होकर व्यंग्य-दृष्टि करती है, वही "नये पत्ते" की है। यहाँ निरालाजी की कला में, कविता में विरोधाभास, विलक्षण प्रयोग, स्वतंत्र भाव-संयोग की स्थितियाँ मिलेगी जिन्हें अति यथार्थवादी कला से संबंधित किया गया

हैं।[39] नये पत्ते में सभी प्रकार की कविताएँ हैं - सामाजिक, राजनीतिक व्यंग्य की, सीधे ढोंगी मार्क्सवादियों पर चोट करने वाली, वैश्विक विकास की, सांस्कृतिक धरातल पर नई व्याख्याएँ करने वाली कविताएँ।

अर्चना

"अर्चना" का प्रकाशन सन 1950 में हुआ है। "अर्चना" में विनय-भक्ति का स्वर मुख्य है। "अर्चना" में निरालाजी ने अपने भाव-सुमनों को समर्पित किया है। "अर्चना" में भक्ति, मानवता, प्रकृत्ति, शृंगार, देश-प्रेम आदि सभी विषयों के गीत हैं, किन्तु भक्ति का स्वर मूल स्वर है। "अर्चना" में शिल्प और नवीन सांगीतिक भंगिमाओं को भी कविने उभारा है, कम-से-कम शब्दों में कवि बडी-से-बडी बात सफलतापूर्वक कह रहा है, हिन्दी शिल्प का नया विकास कर रहा है। "अर्चना" में लगभग 112 गीत हैं।

आराधना

"आराधना" का प्रकाशन सन 1953 में हुआ। "आराधना" की पृष्ठभूमि तथा मनोभूमि, भावभूमि वही है जो कि "अर्चना" की है। "आराधना" में भी भक्ति का स्वर मूल स्वर है तथा अन्य विषयों की रचनाओं की संख्या और महत्व अपेक्षाकृत अत्यल्प एवं आनुषंगिक हैं। "आराधना" संग्रह के आधे से अधिक गीत भक्ति, प्रार्थना और विनय के गीत हैं। "आराधना" का मूल स्वर विनय-गीतों का हैं तथापि इस संग्रह में प्रकृति के कई मनोरम चित्र प्राप्त होते हैं। "आराधना" में कुछ शृंगारिक गीत भी हैं। "आराधना" में कुल 96 गीत हैं।

गीत गुंज

"गीत गुंज" का प्रथम संस्करण सन 1954 में निकला था। इसका द्वितीय परिवर्धित संस्करण सन 1959 में निकला। "गीत गुंज" की रचना निरालाजी की दीर्घकालीन अवस्था के बीच स्वस्थ क्षणों में हुई है। "गीत गुंज" के गीतों में कविने हिन्दी की गीत-शैली का नया संस्कार, परिष्कार और विकास

किया है। "गीत गुंज" में विनय एवं भक्ति, आत्मपरक गीतों के अलावा प्रकृति वर्णन, शृंगार-भावना के भी गीत है। इसमें कुल 39 गीत है। इसके कई गीतों को निरालाजी ने स्वयं गाकर सुनाया था। दीर्घकाल की साधना की उपलब्धियों से "गीत गुंज" का कवि चिरशांति की कामना करता है।

कविश्री

"कविश्री" सन 1955 में प्रकाशित हुई। इसमें 1921 से लेकर 1955 तक की कविता संकलित है। इसमें कुल 22 कविताएँ हैं।

सांध्यकाकली

सन 1954 से मृत्यु समय तक की लिखी हुई कविताओं का अन्तिम संग्रह "सांध्यकाकली" नाम से आपकी मृत्यु के बाद सन 1969 में प्रकाशित हुआ। प्रस्तुत संग्रह में कुल 68 कविताएँ हैं। "सांध्यकाकली" में निरालाजी का स्वर अपनी पूर्ववर्ती ओजस्विता से रहित हो जाता है। इन गीतों की सबसे बडी विशेषता है - सहजता और कलात्मक तटस्थता का अद्‌भूत समन्वय जो कि महान कला की सबसे पहली और बडी शर्त है।[40] आरम्भ से लेकर जीवन के अन्त तक काव्य रचना में संलग्न रहनेवाले इसी भीष्म पितामह की उदात्त एवं श्रेष्ठ भावनाओं का परिचय आपके अंन्तिम संग्रह में भी प्राप्त होता है।[41]

1·2·2 निराला का कहानी साहित्य :-

निरालाजी का कहानो साहित्य आपके उपन्यास साहित्य की भाँति ही समृध्द हैं। आपकी कहानियों के वर्ण-विषय और शिल्प में मौलिकता हैं जिससे वे गरिमामय हो गयी हैं। निरालाजी ने कभी निरूद्देश्य कहानी रचना नहीं की। वस्तुतः निरालाजी की कहानियाँ आपके विचार और भावनाओं का परिणाम है। निरालाजी की लगभग समस्त कहानियों में हमें विद्रोही और क्रांतिकारी विचारों के पोषक पात्र मिलते हैं।

निरालाजी की समस्त कहानियाँ हमें तीन संग्रहों में प्राप्त होती हैं। "लिली" (1933), "चतुरी चमार" (1945), और "सुकुल की बीबी"(1961)।

इन संग्रहों के साथ "सखी", "देवी" आदि संग्रह भी मिलते हैं, किन्तु इनमें पूर्व प्रकाशित संग्रहों की चुनी हुई कहानियाँ आई हैं, इनमें नई कहानी एक भी नहीं है।

छायावादी -रहस्यवादी, भावधारा का मोह एवं स्वप्न भंग, परम्परा-विरोध, सांस्कृतिक-आध्यात्मिक उत्थान एवं सामाजिक यथार्थ का अनुभव, कल्पना एवं वास्तविकता के संघर्ष का चित्रण निरालाजी की कहानियों में प्राप्त होता है।

निरालाजी के प्रथम कहानी संग्रह "लिली" की अधिकांश कहानियों में हमें तत्कालीन नवोदित तरूण समाज की व्यक्तिवाद से परिपूर्ण स्वच्छन्द प्रकृति प्रस्फूटित मिलती है। एक ओर उसमें सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक रूढियों तथा शृंखलाओं को छिन्न-भिन्न करने का उत्साह है और दूसरी ओर उन्मुक्त वातावरण तथा स्वच्छन्द प्रेम के पोषण की उत्कृष्ठ आकांक्षा। "लिली" संग्रह में कुल आठ कहानियों का समावेश है। "लिली" संग्रह में "पद्मा और लिली", "ज्योतिर्मयी", "कमला", "प्रेमिका-परिचय", "परिवर्तन", "हिरनी", "अर्थ" कहानियाँ हैं। "लिली" संग्रह की "अर्थ" कहानी को छोडकर सभी कहानियाँ प्रेम और विवाह से संबंधित हैं। इन कहानियों की नारियाँ दृढ एवं कृतकार्य करनेवाली पहली विद्रोहिणियाँ हैं।

निरालाजी का दूसरा कहानी-संग्रह है "चतुरी चमार"। निरालाजी के दलित पात्रों की सबसे बड़ी विशेषता है, शोषण के प्रति असंतोष और उत्पीडकों के प्रति विद्रोह। "चतुरी चमार" में यह विद्रोह और भी अधिक उभर कर आया है। "चतुरी चमार" संग्रह में कुल आठ कहानियाँ हैं। "सखी", "भक्त और भगवान", "स्वामी सारदानन्दजी महाराज और मैं", "सफलता", "न्याय", "राजा साहब को ठेंगा दिखाया", "चतुरी चमार", और "देवी" कहानियाँ हैं। "चतुरी चमार" संग्रह की कहानियों में यथार्थवादी दृष्टि एवं आत्मकथन की प्रमुखता है। इस संग्रह की "चतुरी चमार" कहानी महत्वपूर्ण है।

निरालाजी के तीसरे कहानी संग्रह "सुकुल की बीबी" में चार कहानियाँ हैं। "क्या देखा", "कल की रूपरेखा", "श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी", "सुकुल की बीबी" कहानियाँ हैं। "सुकुल की बीबी" कहानी महत्वपूर्ण हैं। स्वयं इसमें एक चरित्र हैं और उसका जीवन एक कथा। अपनी आत्मकहानी भी वह बडे नाटकीय ढंग से उतार-चढाव के साथ सुनाती है।

नई कहानी के दिपावली सन 1961 के अंक में छपी "दो दाने" कहानी बंगाल के अकाल पर लिखी गई हैं। जिसमें यह चित्रित किया गया हैं कि, पेट के लिए स्त्रियों को कैसे अपने शील और शरीर को बेचना पडता था। अकाल की विभीषिका का प्रभावशाली चित्र इस कहानी में प्रस्तुत किया है।

1·2·3 निराला का उपन्यास साहित्य :-

निरालाजी का उपन्यास क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। निरालाजी का उपन्यास साहित्य आपकी जीव-जगत परिस्थितियों, संस्कारों एवं विविध मनोदशाओं के अतिरिक्त तत्कालीन सामाजिक अवस्था और तद्विषयक आन्दोलनों से प्रभाव ग्रहण कर निर्मित हुआ हैं। निरालाजी के उपन्यासों में दो विभागों में बाँटा जा सकता हैं - रोमांटिक उपन्यास और यथार्थवादी उपन्यास। निरालाजी के प्रारंभिक उपन्यास "अप्सरा" (1931), "अलका" (1933), "निरूपमा" (1936), तथा "प्रभावती" (1936) ये रोमांटिक उपन्यास हैं। "चोटी की पकड", "काले कारनामे", "चमेली", "फुलवारी लीला" उपन्यास यथार्थवादी उपन्यास हैं।

निरालाजी के रोमांटिक उपन्यासों की सबसे बडी विशेषता है, उसके स्वच्छन्द पात्र। निरालाजी के समस्त रोमांटिक उपन्यासों की कथावस्तु प्रेम संबंधी हैं। निरालाजी के रोमांटिक उपन्यासों में छायावादी कल्पना प्रिय का गहरा रंग हैं। "अप्सरा" और "अलका" उपन्यास घटना प्रधान हैं। "निरूपमा" और "प्रभावती" उपन्यासों में मुख्य कथाओं के साथ-साथ अवान्तर कथाएँ भी हैं। निरालाजी के उपन्यासों के ग्राम्य-वातावरण के चित्रण में तत्कालीन ग्रामीण जीवन और परिस्थितियाँ खूब उभर कर आयी हैं।

निरालाजी के यथार्थवादी उपन्यास सबसे महत्वपूर्ण माने जाते हैं। निरालाजी के यथार्थवादी उपन्यासों में आपकी पितृभूमि और ससुराल के स्थानीय रंग गहरे उतर कर आये हैं और उस वातावरण एवं अपने सम्पर्क में आनेवाले वहाँ के व्यक्तियों का आपने बडी रूचि के साथ चित्रण किया हैं। निरालाजी के यथार्थवादी उपन्यास आप के संघर्ष-रत जीवन का प्रति बिम्बन करते हैं। "चोटी की पकड" और "काले कारनामें" आपकी मानसिक अवस्था की रचनाएँ हैं। इन दोनों की कथा सामग्री तत्कालीन है, किन्तु वह अधिक गहराई से अभिव्यक्त नहीं पा सकी है। निरालाजी का "चमेली" उपन्यास यद्यपि अपूर्ण हैं, किन्तु उसका कुछ अंश सन 1941 "रूपाभ" में प्रकाशित हुआ था।[42] निरालाजी की विद्रोही प्रकृति इसमें चरमोत्कर्ष पर पहुँच गई है। "चमेली" में स्थानीय रंग बडे गहरे हैं, जिसके कारण उसमें वर्णित ग्रामीण वातावरण अत्यंत सजीव हो उठा है।

निरालाजी के रोमांटिक उपन्यास और यथार्थवादी उपन्यास के शिल्प में गहरा अंतर है। रोमांटिक उपन्यासों की विषय-सामग्री मात्र प्रणय संबंध है, यथार्थवादी उपन्यास में उसका उल्लेख तो है, किन्तु वह उनका केन्द्रीय विषय नहीं है। रोमांटिक उपन्यासों के पात्रों की भाँति यथार्थवादी उपन्यासों के पात्र कल्पना लोक में विचरण करनेवाले जीव नहीं हैं , यथार्थ को अपनाने वाले पात्र हैं। दोनों की चित्रण शैली एवं भाषा में भी अपार अन्तर है। पहले में काव्यात्मक भाषा छलकती है तो दूसरे में ठोस यथार्थ का अंकन है।

निरालाजी का "फुलवारी लीला", "सरकार की आँखें" उपन्यास अप्रकाशित हैं। निरालाजी के कवि एवं व्याख्याकार के सम्मिलित दर्शन उपन्यासों के पृष्ठों में प्राप्त होते हैं।[43]

1·2·4 निराला का रेखाचित्र साहित्य :-

निरालाजी के रेखाचित्र का पूर्ण विवेचन आपकी चित्रण शैली, कला-विधान, भाषा प्रयोग, जीवन दृष्टि और साहित्यिक उत्तरदायित्व का परिचय देता है। गद्य की अन्य साहित्य विधाओं की तुलना में आप रेखाचित्र में ही सर्वाधिक

सफल हुए हैं। कविता के क्षेत्र में आपका मुक्त छन्द और गद्य में रेखाचित्र आपके साहित्यकार को जीवित रखेगा। रेखाचित्र तो मानो आपके लिए अभिव्यंजना की प्रकृति भूमि है। रेखाचित्रकार निरालाजी हिन्दी गद्य लेखन के इतिहास में एक महान कलाकार के रूप में चिरस्मरणीय रहेंगे।

निरालाजी के "कुल्लीभाट" (1939) और "बिल्लेसुर बकरिहा" (1941) रेखाचित्र हैं। "कुल्लीभाट" में निरालाजी अप्रतिम व्यंग्यकार और उत्कट साहसी लेखक के रूप में नजर आते हैं। प्रस्तुत कृति की विशेषता यथार्थ चित्रण में निहित है। इस कृति की अन्यतम विशेषता है हास्यरस की प्रधानता। "कुल्लीभाट" का यथार्थवाद निरालाजी के निजी जीवनप्रसंगो में कुल्ली चरित्र में और लेखके के दृष्टिकोण में अनुस्युत है। "कुल्लीभाट" का चरित्र एक बदनाम व्यक्ति के परिवर्तन एवं ऊर्ध्वगामी मन का चरित्र है। प्रस्तुत चरित्र की ओर देखने का लेखक का दृष्टिकोण रहा है मानवता का।

"बिल्लेसुर बकरिहा" प्रगतिशील साहित्य का नमूना है। "बिल्लेसूर बकरिहा" एक परिश्रमी देहाती के सफल जीवन की मार्मिक कहानी है। प्रस्तुत कृति में देहात का यथार्थ चित्र प्राप्त होता है। इस कृति में अन्यतम आकर्षण है। इसमें हास्य और व्यंग्य है। लेखक ने इसे हास्य शैली में प्रस्तुत किया है। हास्य और विनोद से परिपूर्ण इस रचना में निरालाजी पूर्ण तटस्थ रहे हैं। हास्य व्यक्ति विशेष के प्रति न होकर परिस्थिति और चरित्रांकन के ढंग में है।[44]

1·2·5 निराला का निबन्ध साहित्य :-

निरालाजी के गद्य साहित्य में निबंधों का अपना विशिष्ठ स्थान हैं। निबंध संग्रहो में विशेषतः दार्शनिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक विषयों पर निबंध प्राप्त होते हैं। "प्रबन्ध प्रतिमा", "प्रबन्ध पद्म", "चाबुक", "चयन", "संग्रह" तथा "भावुक" ये निबंध आपके लिखे हैं। "प्रबन्ध प्रतिमा" लेखक के विचारात्मक निबंधों का संग्रह है जिसमें राजनीतिक, साहित्यिक एवं समाज के बहुविध विकास एवं चिन्तन की झलक मिलती है। यह सन 1940 में प्रकाशित

किया गया।

"प्रबन्ध पद्म" निबंध संग्रह में निरालाजी ने अपने सामाजिक और राजनीतिक जीवन का वर्णन किया है। इसका प्रकाशन सन 1954 में हुआ है। "चाबुक" सन 1962 में प्रकाशित हुआ। निरालाजी ने यह संग्रह नवजादिक लाल श्रीवास्तवजी की पुण्य-स्मृति में भेंट किया। "चयन" का प्रकाशन सन 1957 में किया। इनमें सामाजिक, राजनीतिक विद्वतापर लिखा है। निरालाजी की तर्कभूमि सभी निबंधों में एक-सी नहीं है। अनेक निबंधों में आपने तुलसीदास के ज्ञान पक्ष का समर्थन किया है। आपके स्वभाव की अक्खड़ता, सत्यवादिता, स्पष्टोक्ति, सिध्दांतप्रियता एवं सर्वोपरि रसज्ञता एवं मृदुता के जितने दर्शन आपके निबंधों में होते हैं, उतने अन्यत्र नहीं।[45]

1·2·6 निराला का आलोचना और अनुवाद साहित्य :-

निरालाजी ने आलोचनात्मक ग्रंथ भी लिखे हैं। इनमें महत्वपूर्ण है "रवींद्र कविता कानन", "पन्त और पल्लव"। इन आलोचनात्मक ग्रंथों के अलावा निबंध संग्रहों तथा "परिमल", "गीतिका" आदि काव्य ग्रंथों की प्रस्तावनाओं में आपके आलोचक के दर्शन होते हैं। "रवींद्र-कविता कानन" का प्रकाशन सन 1928 में हुआ है और "पन्त और पल्लव" का सन 1949 में प्रकाशन हुआ।

निरालाजी की आलोचना से जो बात सीखी जा सकती है वह यह कि अपने विवेचन में आप भाव के साथ विचार तत्व पर काफी बल देते हैं। निरालाजी की आलोचना एक कवि की लिखी हुई आलेचना है। निरालाजी की लिखी हुई आलोचना आपके काव्य के किसी-न-किसी पक्ष को उजागर करती है। आपके कवि मन के गुप्त रहस्य प्रकट करती है।[46]

अनुवाद के क्षेत्र में भी आपने महत्वूपर्ण योगदान दिया। "बंकिम ग्रंथावली", "हिन्दी बंगला का तुलनात्मक व्याकरण", हिन्दी-बंगला शिक्षा", "रस अलंकार", "रामचरित मानस की टीका", "संक्षिप्त महाभारत", "भारत में विवेकानन्द", "श्री

रामकृष्ण वचनामृत" तथा "गोविन्ददास की बंगला कृति" आदि का अनुवाद निरालाजी ने किया है।

इसके अलावा निरालाजी ने नाटक भी लिखे हैं इनमें महत्वपूर्ण है "समाज", "शकुन्तला", "उषा-अनिरूध्द" है जो अप्रकाशित हैं, उनका सिर्फ नाम्मोल्लेख मिलता है।

हिन्दी साहित्य में निरालाजी का आगमन एक नया अध्याय खोलता है। सहस्त्र वर्षीय हिन्दी साहित्य के इतिहास में निरालाजी जैसा विवादास्पद व्यक्ति दृष्टिगत नहीं होता।[47] निरालाजी ने अपनी सम्पूर्ण भावनाओं के साथ साहित्य साधना की थी। अपनी अतुलनीय प्रतिभा से साहित्य वाटिका को संवर्धित किया था, जिससे साहित्य समाज आश्चर्य चकित भी हुआ। निरालाजी का संपूर्ण जीवन साहित्य साधना में व्यतीत हुआ था। साधना से यश मिल सकता है - अर्थ नहीं।[48]

निरालाजी का संपूर्ण जीवन संघर्ष का जीवन रहा है, जिसमें कवि को जय-पराजय दोनों मिले। साधना की उपलब्धि के लिये किये गये प्रत्येक कार्यो में निरालाजी को निराशा ही मिली। दु:ख ही कवि जीवन की कहानी रही, जिसका न तो कोई अंत है, न आदि, पर निरालाजी का संन्यासी मन अपने अवसान काल में अपनी संपूर्ण भावनाओं से परिस्थितियों का अतिक्रमण कर मानवता का साक्षात करता है। जहाँ वह मानव नहीं साधक है - तपस्वी है - आराधक है।[49] आज का समाज निरालाजी के साहित्य से अपनो गति की प्रेरणा प्राप्त करता हुआ आगे बढता रहा है, इससे बडी सफलता किसी और तरह सम्भव नहीं।

संदर्भ :-

1· डॉ·राम विलास शर्मा–निराला की साहित्य साधना, खण्ड 1 पृ·14

2· वही, पृ· 14

3· वही, पृ· 485

4· गोकाकर - कुलकर्णी–निराला साहित्यिक मूल्यांकन, पृ·4

5· धनंज्जय वर्मा, निराला काव्य : पुनर्मुल्यांकन, पृ·65

6· वही, पृ· 64

7· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला, पृ· 10

8· धनज्जय वर्मा - निराला काव्य : पुनर्मुल्यांकन, पृ·67

9· गीतिका का समर्पण

10· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला, पृ·11

11· निराला - अनामिका, पृ·136

12· डॉ·राम विलास शर्मा - निराला की साहित्य साधना - खंड 1, पृ·39

13· गंगाप्रसार पाण्डेय - महाप्राण निराला - पृ·56

14· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 12

15· धनज्जय वर्मा - निराला काव्य : पुनर्मुल्यांकन - पृ·69

16· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 14

17· धनज्जय वर्मा - निराला काव्य : पुनर्मुल्यांकन - पृ· 70

18· वही - पृ· 70

19· वही - पृ· 71

20· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ·15-16

21· भगीरथ मिश्र - निराला - काव्य का अध्ययन - पृ· 31

22· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 18

23· गंगा प्रसाद पाण्डेय - महाप्राण निराला - पृ·87

24· वही - पृ· 116

25· वही - पृ· 116

26· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 27

27· डॉ·राम विलास शर्मा - निराला की साहित्य साधना - खंड - 1,पृ·459

28· वही - पृ· 464

29· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ·21

30· डॉ·राम विलास शर्मा - निराला की साहित्य साधना - खंड 1, पृ·51

31· वही - पृ· 79

32· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 70

33· गोकाककर - कुलकर्णी - निराला : साहित्यिक मूल्यांकन - पृ·112

34· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 78

35· वही - पृ· 84

36· धनंज्जय वर्मा - निराला - काव्य एवं व्यक्तित्व - पृ·138

37· दूधनाथ सिंह - निराला - आत्महन्ता आस्था - पृ· 248

38· निराला - बेला आवेदन

39· (संपादक)पद्मसिंह कमलेश - निराला - पृ· 107

40· बुध्दसेन निहार - विश्व कवि निराला - पृ· 125

41· गोकाककर, कुलकर्णी - निरालाः साहित्यिक मूल्यांकन - पृ·175

42· डॉ·कुसुम वार्ष्णेय - निराला का कथा साहित्य - पृ·43

43· गोकाककर, कुलकर्णी - निराला - साहित्यिक मूल्यांकन - पृ·64

44· डॉ·कुसुम वार्ष्णेय - निराला का कथा साहित्य - पृ· 52

45· संपादक पद्मसिंह कमलेश - निराला - पृ· 208

46· डॉ·राम विलास शर्मा - निराला की साहित्य साधना - खंड 2, पृ·288

47· राम अवध शास्त्री - निराला : व्यक्ति और कवि - पृ·210

48· वही - पृ· 218

49· वही - पृ· 223